Toppersnotes
Unleash the topper in you

UP – PGT

स्नातकोत्तर शिक्षक

उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा सेवा चयन बोर्ड

अर्थशास्त्र

भाग – 2

SIERRA INNOVATIONS

UP PGT

अर्थशास्त्र

क्र.सं.	अध्याय	पृष्ठ संख्या
1.	**मौद्रिक अर्थशास्त्र** • मुद्रा का मूल्य और उसकी माप • मुद्रा परिणाम सिद्धान्त, कीन्स एवं कैम्ब्रिज मौलिक समीकरण • कीन्स का मौद्रिक सिद्धान्त– मुद्रा प्रसार, मांग जनित एवं लागत जनित स्फीति, फिलिप्स वक्र, मुद्रा स्फीति एवं मुद्रा संकुचन की तुलनात्मक श्रेष्ठता, मौद्रिक संस्थाएं • केन्द्रीय एवं वाणिज्य बैंकों के कार्य • साख सृजन, केन्द्रीय बैंक साख नियंत्रण की विधियां • भारतीय रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति • राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण बैंक, राष्ट्रीय औद्योगिक (दीर्घकालीन) कोष, अवमूल्यन, अधिमूल्यन, विनिमय नियंत्रण प्रत्यक्ष एवं परोक्ष विधिया	1-115
2.	**अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र** • अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सिद्धान्त (एडमस्मिथ, रिकार्डो और मिल) पारस्परिक मांग सिद्धान्त, मार्शल का अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य का सिद्धान्त • अवसर लागत सिद्धान्त, (हैबरलर) समान्य संतुलन सिद्धान्त (हेक्स्चर–ओहलिन)	116-144
3.	**विदेशी विनिमय दर** • क्रय शक्ति समता एवं भुगतान संतुलन सिद्धान्त, व्यापार की शर्त, स्वतंत्र व्यापार बनाम संरक्षण • प्रशुल्क, राशिपतन, द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय व्यापार, प्रशुल्क एवं व्यापार सम्बन्धी सामान्य समझौता (जी०ए०टी०टी०), संयुक्त राष्ट्र संघ का व्यापार एवं विकास सम्मेलन (अंकटाड)	145-181

	• भारत में विदेशी पूंजी की वर्तमान स्थिति, विदेशी सहायता, अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं, आइ०ए०एफ०, आई० बी०आर० डी0, अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ (आई०डी०ए०), एशियन विकास बैंक, यूरोपियन साझा बाजार एवं अन्तर्राष्ट्रीय तरलता।	

मौद्रिक अर्थशास्त्र

मुद्रा का मूल्य और उसकी माप– मुद्रा परिणाम सिद्धांत

मुद्रा की प्रकृति (**Nature of Money**)

मुद्रा के अर्थ और प्रकृति के संबंध में बहुत मतभेद और भ्रान्ति चली आ रही है। जैसा कि स्किटोव्स्की (Stavisky) ने लक्ष्य किया है, 'मुद्रा की धारणा को परिभाषित करना कठिन है, आंशिक रूप से तो इसलिए कि यह एक नहीं तीन कार्य करती है, जिनमें से प्रत्येक कार्य मुद्रात्व की कसौटी प्रदान करता है। ये कार्य हैं: (1) लेखा की इकाई, (2) विनिमय का माध्यम, (3) मूल्य का संचय'' यद्यपि स्किटोव्स्की (Stavisky) ने मुद्रात्व के कारण मुद्रा को परिभाषित करने की कठिनाई की ओर संकेत किया है तथापि उसने मुद्रा की व्यापक परिभाषा दी है। प्रो. कोलबान (Colborn) की परिभाषा के अनुसार ''मुद्रा मूल्यांकन तथा भुगतान का माध्यम हैय लेखा की इकाई के रूप में भी तथा विनिमय के सामान्यतः स्वीकार्य माध्यम के रूप में भी।१९ कोलबान की परिभाषा बहुत व्यापक है। उन्होंने इस परिभाषा में 'मूर्त' मुद्रा जैसे–सोना, चेक, सिक्के, करेन्सी, नोट, बैंक ड्राफ्ट आदि को तो शामिल किया ही है, साथ ही 'अमूर्त' मुद्रा को भी ले लिया है जो हमारे मूल्य, कीमत तथा योग्यता के विचारों की वाहिका है। इस तरह की व्यापक परिभाषाएं देखकर सर जॉन हिक्स (John Hicks) ने कहा था, ''मुद्रा अपने कार्यों से परिभाषित होती है, जिस किसी वस्तु को मुद्रा की भांति प्रयोग किया जाए वही मुद्रा बन जाती है। मुद्रा वहीं है जो मुद्रा का कार्य करे।'' ये मुद्रा की कार्यात्मक परिभाषाएं हैं क्योकि ये मुद्रा को उसके कार्यों की दृष्टि से परिभाषित करती है।

कुछ अर्थशास्त्री मुद्रा को कानून की शब्दावली में परिभाषित करते है और कहते है, ''जिस किसी चीज को सरकार मुद्रा घोषित कर दे, वही मुद्रा है।'' इस तरह की मुद्रा को सामान्य रूप से सभी स्वीकार करते है और इसमें ऋण चुकाने की कानूनी शक्ति होती है। परन्तु हो सकता है कि लोग वैध मुद्रा स्वीकार न करें और उसके बदले में वस्तुएं तथा सेवायें बेचने को तैयार न हों। दूसरी ओर सम्भव है कि लोग ऐसी चीजों को मुद्रा के रूप में स्वीकार कर लें जिन्हें ऋण चुकाने के लिए कानूनी तौर पर मुद्रा नहीं कहा गया, परन्तु जो बहुत प्रचलित हों। इस तरह की चीजें, वाणिज्यिक बैंको द्वारा जारी किए गए चेक और नोट है। इस प्रकार, वैधता के अतिरिक्त भी कुछ ऐसी बातें है जो कुछ चीजों को मुद्रा बनाती है।

मुद्रा की सैद्धान्तिक और अनुभवसिद्ध परिभाषाएं (**Theoretical and Empirical Definitions of Money**)

मुद्रा की परिभाषा के बारे में अर्थशास्त्री एकमत नहीं है, इसलिए प्रो. जॉनसन इस संबंध में चार मुख्य विचारधाराओं का उल्लेख करता है जिनकी पेराक और सेविंग के विचार के साथ नीचे विवेचना की गई है।

परम्परागत परिभाषा

परम्परागत विचारधारा, जिसे करेन्सी संप्रदाय भी कहते है, के अनुसार, मुद्रा को करेन्सी और माँग जमा कहा गया है। इसका सबसे महत्वपूर्ण कार्य विनिमय का माध्यम के रूप में है। केन्ज ने परम्परागत विचारधारा का पालन करते हुए अपनी पुस्तक General Theory में नकदी और बैंको की माँग जमा को

मुद्रा परिभाषित किया। हिक्स ने अपने Critical Essays in Monetary Theory में मुद्रा की प्रकृति के परम्परागत तिहरे वर्गीकरण को बताया है: "लेखा की इकाई, भुगतान करने का साधन और मूल्य के संचय के रूप में।" बैंकिंग संप्रदाय ने मुद्रा की परम्परागत परिभाषा को मनमानी इसकी आलोचना की। इसमें मुद्रा का अर्थ बहुत संकुचित है क्योकि अन्य परिसंपत्तियां भी है जो समानरूप से विनिमय का माध्यम स्वीकार की जाती है। इनमें वाणिज्यिक बैंको के समय जमा-पत्र, विनिमय बिल, आदि शामिल है। इन परिसंपत्तियों की उपेक्षा करके परम्परागत विचारधारा उनके प्रभाव से उनके वेग का विश्लेषण करने में समर्थ नहीं है। फिर, इनको मुद्रा की परिभाषा से निकालकर, केन्जवादी मुद्रा के ब्याज-लोच माँग फलन पर अधिक बल देते है। अनुभवसिद्ध तौर से उन्होंने ब्याज दर द्वारा उत्पादन और मुद्रा के स्टॉक के बीच संबंध स्थापित किया।

फ्रीडमैन की परिभाषा

मुद्रा से फ्रीडमैन का अभिप्राय है, "अक्षरशः वे सभी डालर जो लोग अपनी जेबों में लिए घूमते है, और वे सभी डालर जो माँग जमा और वाणिज्यिक बैंक के पास समय जमा के रूप में उनके बैंक खातों में है।" अतः उसकी परिभाषा के अनुसार, मुद्रा "करेन्सी और वाणिज्यिक बैंको की कुल समायोजित जमाओं का जोड है।" यह मुद्रा की व्यावहारिक परिभाषा है, जिसका फ्रीडमैन और श्वार्टज चुने हुए 1929, 1935, 1950, 1955 और 1960 वर्षों के लिए अमरीका की मौद्रिक प्रवृत्तियों के अनुभवसिद्ध अध्ययन के लिए प्रयोग करते है। यह मुद्रा की संकुचित परिभाषा थी और वाणिज्यिक बैंको के दोनों माँग और समय जमाओं में समायोजन तथा समाज और वाणिज्यिक बैंको की बढ रही वित्तीय कृत्रिमता को ध्यान में रख कर रची गई थी। परन्तु फ्रीडमैन इस कृत्रिमता का एक सूचक भी स्थापित नहीं कर सका। इस समायोजन के साथ भी, नकद और जमा मुद्राओं की दीर्घकाल तक पूरी तरह से तुलना नहीं की जा सकी थी। फिर भी, 1950, 1955, और 1960 के सहसंबंध प्रमाण ने मुद्रा को इस विस्तृत परिभाषा का सुझाव दिया: "कोई परिसंपत्ति जो क्रय शक्ति के अस्थाई निवास के रूप में क्षमता रखती हो।"

इस प्रकार फ्रीडमैन मुद्रा की दो प्रकार की परिभाषाएं देता है। एक सैद्धान्तिक आधार पर और दूसरी अनुभवसिद्ध आधार पर। फ्रीडमैन मुद्रा की अपनी परिभाषा में दृढ नहीं है और विस्तृत दृष्टिकोण रखता है जिसमें बैंक जमा, गैर बैंक जमा और कई अन्य प्रकार की परिसंपत्तियां शामिल होती है, जिनके द्वारा मौद्रिक अधिकारी रोजगार, कीमतों और आय के भावी-स्तर या किसी अन्य महत्वपूर्ण समष्टि चर को प्रभावित करता है।

रेडक्लिफ की परिभाषा

रेडक्लिफ समिति ने मुद्रा को "नोट योग बैंक जमा" के रूप में परिभाषित किया। इसमें केवल वे परिसंपत्तियां शामिल है, जो सामान्यतौर से विनिमय के माध्यम के रूप में प्रयोग की जाती है। परिसंपत्तियों से अभिप्राय तरल परिसंपत्तियों से है जिनका अर्थ है वस्तुओं एवं सेवाओं के लिए कुल प्रभावी माँग को प्रभावित कर रही मौद्रिक मात्रा। इसमें व्यापक रूप से साख को शामिल समझा जाता है। इस प्रकार, समस्त तरलता स्थिति व्यय करने के निर्णयों से संबद्ध होती है। व्यय करना बैंक में नकदी या मुद्रा तक सीमित नहीं है, बल्कि मुद्रा की वह मात्रा है जिसे लोग एक परिसंपत्ति बेचकर या उधार लेकर या जैसे बिक्री से प्राप्त आय समझकर धारण कर सकते है। समिति ने मुद्रा के प्रचलन वेग की धारणा का प्रयोग नहीं किया क्योंकि संख्यात्मक स्थिरांक के रूप में इसमें कोई भी व्यावहारिक मात्रा नहीं पाई जाती है।

अशोधित अनुभवसिद्ध प्रयोगों के आधार पर कमेटी ने ब्याज दर द्वारा मुद्रा और आर्थिक क्रिया के बीच प्रत्यक्ष या परोक्ष संबंध नहीं पाया। परन्तु उसने सरलता के आधार पर इनमें नया संक्रमण तंत्र प्रदान किया है। उन्होंने व्याख्या की कि ब्याज दरों में गति का अर्थ है वित्तीय संस्थाओं द्वारा धारित बहुतसी परिसंपत्तियों के पूँजी मूल्य में महत्वपूर्ण परिवर्तन है। ब्याज दरों में वृद्धि होने से कुछ उधारदाता कम उधार देते है, क्योंकि पूँजी मूल्य गिर जाते है और अन्य इसलिए कि उनका ब्याज-दर ढांचा दृढ होता है। दूसरी ओर, ब्याज दर में गिरावट उनके तुलन-पत्रों में वृद्धि करती है और उधारदाताओं को नया व्यवसाय खोजने के लिए प्रोतसाहित करती है।

गुर्ले-शॉ परिभाषा

गुर्ले तथा शॉ वित्तीय मध्यस्थों द्वारा रखी गई काफी मात्रा में तरल परिसंपत्तियां और गैर-बैंक मध्यस्थों की देयताओं को मुद्रा के निकट स्थानापन्न समझते है। मध्यस्थ संचय के रूप में मुद्रा के लिए स्थानापन्न प्रदान करते है। यथार्थ मुद्रा जिसे करेन्सी योग जमा परिभाषित किया गया है, केवल एक तरल परिसंपत्ति है। इस प्रकार, उन्होंने तरलता पर आधारित मुद्रा की एक विस्तृत परिभाषा निर्मित की है जिसमें बांड, इंशयोरेंस रिजर्व, पेंशन फंड, बचत और ऋण शेयर शामिल है। वे मुद्रा स्टॉक के वेग में विश्वास रखते है जो गैर-बैंक मध्यस्थों द्वारा प्रभावित होता है।

पेसक-सेविंग की परिभाषा

पेसक और सेविंग के अनुसार, मुद्रा में बैंको के माँग जमा और सरकार द्वारा जारी मुद्रा शामिल होने चाहिए। वे बैंक मुद्रा में समय और बचत खाते शामिल नहीं करते है। वे कुल मुद्रा को, जिसमें माँग-जमा शामिल है, समाज की शुद्ध संपत्ति मानते है। वे मुद्रा की ऋण के साथ तुलना करते है। मुद्रा ब्याज नहीं देती लेकिन ऋण ब्याज देता है। ऋण स्वयं संपत्ति नहीं है, क्योंकि जो बैंक मुद्रा को धारण करते है, उसे एक परिसंपत्ति मानते है, जबकि बैंक उसे प्रभावी देयता मानते है।

इस प्रकार, पेसक और सेविंग मुद्रा की एक व्यवहार्य परिभाषा का अनुसरण करते है जिसमें तीन शर्ते शामिल है : प्रथम, वे वस्तु, मुद्रा और आदेश मुद्रा को उनके धारकों की परिसंपत्ति के रूप में मानते है और किसी की भी देयताएं नहीं मानते। दूसरे, सरकार वाणिज्यिक बैंको को मुद्रा निर्माण के लिए एकाधिकार अधिकार प्रदान करती है, जो आगे व्यक्तियों के निजी ऋणों के लिए बैंक मुद्रा बेचकर इसका प्रयोग करते है। जिन व्यक्तियों के पास बैंक मुद्रा होती है वे इसे पूर्णरूप से एक परिसंपत्ति मानते है। दूसरी ओर, बैंक इसे एक प्रभावी देयता मानते है। अतः पेसक और सेविंग बैंक मुद्रा घटा रिजर्व (जो बैंक अपने जमाकर्ताओं की माँग को पूरा करने के लिए रखते है) को अर्थव्यवस्था की शुद्ध परिसंपत्ति मानते है। तुलन-पत्र में, बैंक मुद्रा को एक परिसंपत्ति और निजी ऋणों को एक देयता दिखाया जाता है। तीसरे, यदि बैंक मुद्रा निर्मित करना लागत रहित हो और जमा पर कोई ब्याज भुगतान नहीं दिए जाते, तो बैंक की शुद्ध संपत्ति अपरिवर्तित रहती है क्योंकि परिसंपत्तियां और देयताएं दोनों समान मात्रा में बढते है। यह दर्शाता है कि बैंक की शुद्ध संपत्ति शून्य है।

पेसक और सेविंग बैंक मुद्रा में समय और बचत जमाओं को शामिल नहीं करते है। परन्तु जब ब्याज भुगतान हों तो वे बैंक मुद्रा में सम्मिलित होते है। उनका तर्क है कि एक बार जब ये जमाएं ब्याज देना प्रारम्भ करती है, तो वे मुद्रा का कार्य करती रहेंगी।

आलोचनाएं – पेसक और सेविंग की परिभाषा की निम्न आलोचनाएं की गई है–

1. फ्रीडमैन और शर्वाटज के अनुसार, पेसक और सेविंग की स्थिति का तर्क यह है कि मुद्रा शुद्ध परिसंपत्ति के रूप में उच्च शक्तियुक्त मुद्रा होनी चाहिए जिसे पेसक एवं सेविंग ने बहुत संकुचित कहकर अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार, उच्च शक्तियुक्त मुद्रा पेसक एवं सेविंग की प्रथम कसौटी को पूरा करती है।
2. पेसक और सेविंग विश्लेषण में पेटिनकिन कुछ भ्रांति पाता है, जब वे बैंक मुद्रा में समय और बचत जमा शामिल नहीं करते है। पेसक एवं सेविंग बैंको द्वारा प्रयोग किए गए परम्परागत लेखांकन तरीकों की भी आलोचना करते है। परन्तु पेटिनकिन उनके मुद्रा निर्माण के विश्लेषण की परम्परागत लेखांकन द्वारा व्याख्या करता है और उसे अधिक लाभदायक पाता है।
3. पेसक और सेविंग की आलोचना सामाजिक संपत्ति को परिभाषित करने में बैंक–मुद्रा की दोहरी गणना करने के लिए भी की गई है। प्रथम, वे इसमें मुद्रा पूर्ति का भाग शामिल करते है, और फिर वे बैंकिग प्रणाली की शुद्ध संपत्ति को अन्य तत्व में सम्मिलित करते है। वास्तव में, एक या दूसरे की गणना करनी चाहिए, न कि दोनों की।

इन आलोचनाओं के बावजूद, पेसक और सेविंग का मुद्रा पर विचार महत्वपूर्ण है, क्योंकि वे शुद्ध संपत्ति का अध्ययन करते है जो वाणिज्यिक बैंको को प्राप्त होती है।

मुद्रा के कार्य

प्रो. चौण्डलर का कथन है कि किसी आर्थिक प्रणाली में मुद्रा का केवल एक मौलिक कार्य है–माल तथा सेवाओं के लेन–देन को सरल बनाना। मुद्रा के इस कार्य से लेन–देन में लगने वाले समय तथा परिश्रम की बचत होती है। मुद्रा के सभी कार्यो का वर्गीकरण इस प्रकार से किया जा सकता हैं ।

1. प्राथमिक या मुख्य कार्य,
2. सहायक कार्य,
3. आकस्मिक कार्य एवं
4. अन्य कार्य।

प्राथमिक या मुख्य कार्य :– प्राथमिक या मुख्य कार्य– प्राथमिक मुद्रा के मुख्यतः दो कार्य है–

1. विनिमय का माध्यम,
2. मूल्य मापक।

जिसका विवेचन निम्नवत् है :

1. विनिमय का माध्यम

   मुद्रा में सामान्य स्वीकृति का गुण है। प्रत्येक व्यक्ति इसे स्वीकार करने के लिए तत्पर रहता है। वर्तमान समय में जितना लेन–देन होता है उसका भुगतान अधिकतर मुद्रा के द्वारा होता है, एक उत्पादक द्वारा थोक विक्रेता को माल बेचा जाता है, बदले में मुद्रा प्राप्त की जाती है। थोक विक्रेता फुटकर व्यापारी को सामान बेचता है, बदले में मुद्रा प्राप्त करता है तथा फुटकर व्यापारी ग्राहक को मुद्रा के बदले में सामान बेचता है। इस प्रकार समाज के सभी क्रेता–विक्रेता, उपभोक्ता–व्यापारियों अथवा सेवक–मालिकों के बीच मुद्रा एक ऐसी कडी है जो प्रत्येक वर्ग को प्रतिफल दिलाने में सहायक होती है। अतः मुद्रा के बिना वर्तमान विनिमय व्यवस्था की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

2. मूल्य मापक

मुद्रा का दूसरा कार्य है समाज में उत्पन्न अथवा प्रस्तुत सब सेवाओं का मूल्य-मापन करना है। जिस प्रकार भौतिक वस्तुओं के नाप, तौल, अथवा लम्बाई, चौडाई, आदि ग्राम, लीटर अथवा मीटर में नापे जाते हैं, उसी प्रकार सब वस्तुओं तथा सेवाओं के मूल्य का एकमात्र माप मुद्रा है। वास्तव में मुद्रा के इस कार्य के बिना भी विनिमय सम्भव नहीं क्योंकि कोई भी वस्तु खरीदने से पहले ग्राहक उसका मूल्य जानना चाहता है और प्रत्येक वस्तु का मूल्य मुद्रा में जैसे 2 रू. मीटर, 3 रू. लीटर, 4 रू. किलोग्राम, आदि ही बताया जाता है जिसके आधार पर प्रत्येक व्यक्ति यह निश्चित कर लेता है कि अमुक वस्तु अमुक मात्रा में खरीदनी है। इस प्रकार, मुद्रा 'हिसाबी इकाई' के रूप में कार्य करती है। दूसरे शब्दों में वर्तमान समय में समूची क्रय-विक्रय व्यवस्था का आधार मुद्रा है।

सहायक कार्य :- प्राथमिक कार्यो के अलावा मुद्रा के कुछ सहायक कार्य भी है जो निम्नलिखित है:-

1. भावी भुगतानों का आधार,
2. मूल्य संचय का साधन,
3. मूल्य हस्तान्तरण।

जिसका विवेचन निम्नवत् है:-

1. भावी भुगतानों का आधार

वर्तमान समय का आर्थिक ढांचा साख पर आधारित है और साख अथवा उधार मुद्रा के रूप में ही दी जाती है। उधार देते समय ब्याज की दर तथा भुगतान की किस्तें मुद्रा में ही निश्चित की जाती है जिससे ऋणी को यह निश्चय रहता है कि उसे कब और कितनी राशि चुकानी है। इस संबंध में यह स्मरण रखना चाहिए कि मुद्रा भावी भुगतानों का उचित आधार तभी रह सकती है जबकि उसके मूल्य में सामान्यतः स्थिरता रहे। अन्य वस्तुओं की तुलना में मुद्रा के मूल्य में अधिक स्थिरता रहती है।

2. मूल्य संचय का साधन

मनुष्य भविष्य की आकस्मिक विपत्तियों अथवा सामाजिक तथा व्यक्तिगत आवश्यकताओं के लिए अपनी वर्तमान आय का कुछ भाग बचाकर रखना चाहता है, परन्तु उसे यह निश्चय होना चाहिए कि उसकी बचत सुरक्षित है और उसका प्रयोग किसी भी समय कर सकता है। मुद्रा में बचत करना इस दृष्टि से भी उचित है कि उसे बैंक में जमा करके ब्याज भी कमाया जा सकता है। मुद्रा के रूप में मूल्य संचय को प्रोत्साहित करने के लिए आश्वयक है कि मुद्रा का मूल्य स्थिर रखने का प्रयत्न किया जाए अन्यथा लोग अपनी बचतें सोना, भूमि अथवा अन्य सम्पत्तियों के रूप में रखना पसन्द करेंगे क्योंकि इनके मूल्यों में कमी आने का भय नहीं होता है।

3. मूल्य हस्तान्तरण

मुद्रा विनिमय माध्यम का कार्य करती है। इस मुख्य कार्य के कारण ही मुद्रा मूल्य हस्तान्तरण की सर्वोत्तम साधन बन गई है। उदाहरणतः, यदि कोई व्यक्ति जयपुर छोडकर आगरा बसना चाहता है तो वह जयपुर स्थित मकान, जमीन तथा अन्य सारी सम्पत्ति मुद्रा में बेचकर आगरा में नई सम्पत्ति खरीद सकता है।

आकस्मिक कार्य

प्राथमिक एवं सहायक कार्यों के अतिरिक्त प्रो. डेविड किनले ने मुद्रा के चार आकस्मिक कार्यों का उल्लेख किया है:-

1. आय का वितरण,
2. पूँजी की उत्पादकता बढाना,
3. साख का आधार,
4. सम्पत्ति की तरलता।

जिसकी व्याख्या नीचे किया गया है:-

1. आय का वितरण

   किसी देश में जितना उत्पादन होता है उसमें भूमि, श्रम, पूँजी तथा साहस का सहयोग होता है, अतः प्रत्येक वर्ग को उसके सहयोग का उचित प्रतिफल मिलना चाहिए। मुद्रा में न केवल समस्त राष्ट्रीय आय का अनुमान लगाया जाता है बल्कि प्रत्येक वर्ग को उसके योगदान के अनुपात में भुगतान भी मुद्रा में ही दिया जाता है।

2. पूँजी की उत्पादकता

   यद्यपि पूँजी में अन्य कई तत्वों का समावेश होता है फिर भी मुद्रा पूँजी का सबसे बडा आधार है। मुद्रा के द्वारा ही पूँजी को ऐसे विनियोग में हस्तान्तरित किया जा सकता है जहां उसकी उत्पादकता तुलनात्मक रूप से अधिक हो। इससे पूँजी की गतिशीलता और उत्पादकता में वृद्धि होती है।

3. साख का आधार

   बैंको तथा अन्य वित्तीय संस्थानों का व्यवसाय साख के आधार पर ही चलता है तथा साख का सृजन बैंको में जमा राशि के आधार पर किया जाता है जो मुद्रा के रूप में होती है। जमा राशि के कारण ही ग्राहकों का बैंकों में विश्वास बना रहता है।

4. सम्पत्ति की तरलता

   मुद्रा सम्पत्ति को तरल रूप प्रदान करती है। भूमि, मकान, मशीनें, आदि बेचने से इनके बदले में मुद्रा प्राप्त होती है। यह नकद राशि अधिकतम लाभ देने वाले स्थानों, केन्द्रों अथवा व्यवसायों में सरलता से भेजी जा सकती है और इससे अधिकतम लाभ कमाया जा सकता है। वास्तव में, प्रत्येक व्यक्ति अपनी सम्पत्ति के कुछ भाग को तरल रूप में ही रखना चाहता है।

अन्य कार्य

उपर्युक्त कार्यों के अतिरिक्त मुद्रा के कुछ और भी कार्य है जो निम्नवत् है :-

1. मुद्रा निर्णयों में सहायक

   मुद्रा एक संचय का साधन है और उपभोक्ता अपनी दैनिक आवश्यकताओं को मुद्रा के अनुसार पूरा करता है। यदि उपभोक्ता के पास साइकिल है परन्तु निकट भविष्य में उसे स्कूटर की आवश्यकता है, तो

ऐसी स्थिति में उपभोक्ता संचय की गई मुद्रा और साइकिल बेचकर स्कूटर खरीद सकता है। इस प्रकार मुद्रा निर्णय करने में सहायक होती है।

2. समन्वय का आधार

व्यापार को सुचारू रूप से चलाने के लिए मुद्रा बाजार एवं पूँजी बाजार में समन्वय मुद्रा द्वारा ही होता है। विभिन्न प्रकार की विदेशी सहायता का पुनर्भुगतान का मूल्य मुद्रा द्वारा मापा जाता है और विदेशी विनिमय में समन्वय भी मुद्रा द्वारा स्थापित होता है।

मुद्रास्फीति – प्रकार, प्रभाव एवं नियन्त्रण (Inflation: types, effects and control)

मुद्रास्फीति का अर्थ

मुद्रा स्फीति एक विवादित अवधारणा है। एक सर्वमान्य परिभाषा न होने के कारण इसके स्वरूप तथा स्वभाव की व्याख्या करने के लिए प्रचलित परिभाषाओं को तीन भागों में बांटा जाता है।

(अ) सामान्य दृष्टिकोण

क्राउथर के अनुसार, ''स्फीति वह स्थिति है जिसमें मुद्रा का मूल्य गिर रहा हो अर्थात् वस्तुओं की कीमतें बढ रही हों।'' यह परिभाषा सभी प्रकार की मूल्य वृद्धि को स्फीति मानती है। जबकि मन्दीकाल में मूल्यों में होने वाली वृद्धि स्फीति नहीं कही जायेगी। इसके अलावा यह परिभाषा केवल रोग के लक्षण को व्यक्त करती है इसके कारण एवं स्वभाव को नहीं।

(ब) मुद्रा परिमाण सिद्धान्त दृष्टिकोण –

हाटे, केमरर तथा गोल्डेन वीजर तथा मिल्टन फ्रीडमैन स्फीति को मौद्रिक घटना मानते हैं। फ्रीडमैन के अनुसार, ''प्रत्येक जगह एवं प्रत्येक समय मुद्रा स्फीति एक मौद्रिक घटना है और यह उत्पादन की तुलना में मुद्रा की मात्रा में अधिक वृद्धि होने के कारण उत्पन्नन होती है।'' अर्थात् वस्तुओं तथा सेवाओं के कुल लेन–देन के सन्दर्भ में मुद्रा की मात्रा मूल्य स्तर का निर्धारण करती है। वस्तुओं तथा सेवाओं की तुलना में यदि मुद्रा की मात्रा अधिक हो जाय तो निश्चित रूप से मूल्य में वृद्धि होगी और यही मुद्रा स्फीति होगी। इसी बात को कोलबान ने इस प्रकार व्यक्त किया। ''बहुत अधिक मुद्रा द्वारा बहुत कम वस्तुओं का पीछा करना ही मुद्रा स्फीति है।'' पीगू ने लिखा कि, **''.... too much money cashes too few goods''** अर्थात् बहुत अधिक मुद्रा बहुत कम वस्तुएँ प्राप्त करती है। टी.ई. ग्रेगरी, हाटे तथा केमरर भी मुद्रा की मात्रा में असामान्य वृद्धि को ही मुद्रा स्फीति मानते हैं।

उपर्युक्त सभी परिभाषाएँ यह मानती है कि मुद्रा की पूर्ति स्फीति का मुख्य कारण है। सभी परिभाषाएँ अपना ध्यान एक विशेष प्रकार की स्फीतिक स्थिति पर अपना ध्यान केन्द्रित करती है। यह मान लिया गया है कि बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता पायी जाती है और माँग तथा पूर्ति में कोई परिवर्तन बिना किसी अपवाद के कीमत में परिवर्तन करता है परन्तु पूर्ण प्रतियोगिता ही शायद कभी पायी जाती हो। इसके अलावा कीमतों को कभी–कभी सरकार द्वारा भी नियन्त्रित किया जाता है।

(ख) पूर्ण रोजगार दृष्टिकोण

कींस मुद्रा परिमाण दृष्टिकोण से सहमत नहीं है। उनके अनुसार यदि अर्थव्यवस्था में मानवीय एवं गैर मानवीय संसाधन बेकार पडे हैं तब मुद्रा की मात्रा में वृद्धि मूल्य में वृद्धि करने के बजाय उत्पादन तथा रोजगार में वृद्धि करेगी तथा स्फीतिक दशाएँ उत्पन्न नहीं होगी। कींस ने पूर्ण रोजगार के पहले भी मूल्य में वृद्धि की सम्भावना को स्वीकार किया परन्तु उसे आंशिक स्फीति की संज्ञा दी। पूर्ण रोजगार के बाद अतिरिक्त माँग की दशाएँ, पूर्ति के बेलोचदार हो जाने के कारण, वास्तविक स्फीति को जन्म देती है। कींस के सिद्धान्त को एक चित्र द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

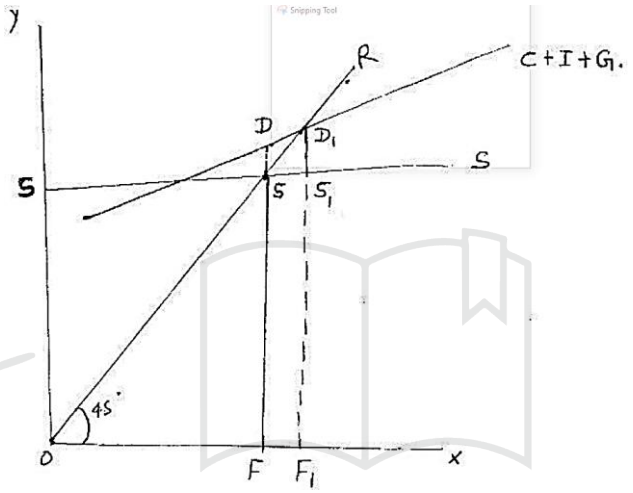

आय अथवा उत्पादन

उपर्युक्त चित्र में x अक्षर पर आय तथा y अक्षर पर व्यय प्रदर्शित है। व् समान वितरण रेखा आय तथा व्यय के बीच सन्तुलन बिन्दुओं को व्यक्त करती है। C + I + G (उपभोग व्यय (C), विनियोग व्यय (I) तथा सरकारी व्यय (G) आय के विभिन्न स्तरों पर समग्र प्रभावपूर्ण माँग को व्यक्त करता है। पूर्ण रोजगार का स्तर os या OF द्वारा व्यक्त किया गया है। SS रेखा x अक्ष के समानान्तर एक सीधी रेखा है जो यह बताता है कि पूर्ण रोजगार के बाद उत्पादन में वृद्धि सम्भव नहीं है। चित्र से स्पष्ट है कि OF आय के स्तर पर उत्पादन की क्षमता FS तथा प्रभावपूर्ण माँग FD है। अर्थात् DS अतिरिक्त माँग है। आय के OF_1 स्तर पर अतिरिक्त माँग D_1S_1 है। अतः पूर्ण रोजगार के बाद अतिरिक्त माँग की मात्रा कीमत स्तर के व्यवहार का निर्धारण करती है। स्पष्ट है कि समग्र प्रभावपूर्ण माँग को पूर्ण क्षमता स्तर (Full Capacity Level) तक लाकर अतिरिक्त माँग को समाप्त किया जा सकता है।

मुद्रास्फीति के रूप :- मुद्रा स्फीति को मात्रा, गति प्रक्रिया तथा समय के आधार पर कई रूपों में व्यक्त किया जा सकता है।

1. खुली एवं दमित स्फीति

   खुली स्फीति की दशा में बाजार स्वतन्त्र होता है तथा माँग और पूर्ति की शक्तियों द्वारा निर्धारित मूल्य स्तर अतिरिक्त माँग की स्थिति, जिसे स्फीति कहते हैं, को व्यक्त करता है। दमित स्फीति का सम्बन्ध नियन्त्रित कीमतों से होता है। यह कीमतें जीवन लागत सूचकांक को ध्यान में रखकर निर्धारित की जाती है और माँग तथा पूर्ति की वास्तविक स्थिति को प्रतिबिम्बित नहीं करती है।

2. रेंगती, चलती-दौडती तथा कूदती मुद्रा स्फीति

रेंगती स्फीति का स्वभाव नम्र होता है तथा यह अर्थव्यवस्था के लिए उत्प्रेरक का कार्य करती है। केण्ट का मानना है कि 3 प्रतिशत वार्षिक मूल्य वृद्धि को रेंगती स्फीति समझना चाहिए। चलती स्फीति तब होती है जब वार्षिक मूल्य वृद्धि 3 से 4 प्रतिशत वार्षिक हो। दौडती हुई स्फीति में वार्षिक मूल्य वृद्धि की दर 10 प्रतिशत वार्षिक होती है, जबकि कूदती स्फीति में वार्षिक मूल्य वृद्धि की दर 100 प्रतिशत तक हो जाती है। उपर्युक्त स्थितियों को रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

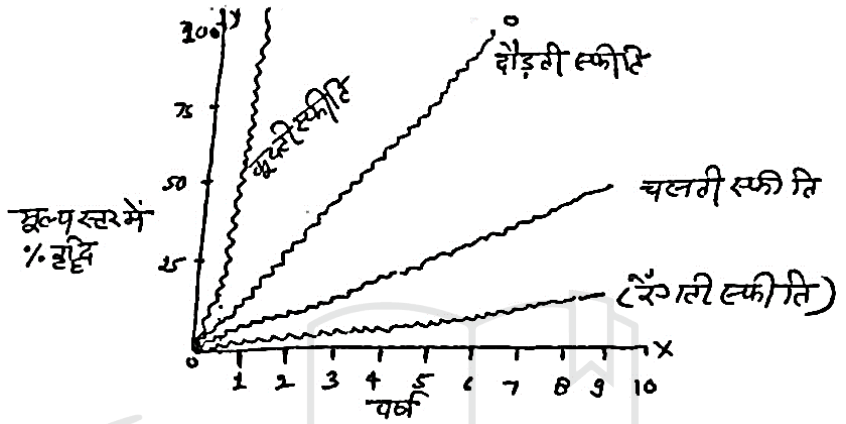

3. वस्तु स्फीति

उत्पादन में कमी होने के कारण जब सामान्य मूल्य में वृद्धि होती है तब उसे वस्तु स्फीति कहते हैं।

4. मुद्रा स्फीति

जब अत्यधिक पत्र मुद्रा निर्गमन के कारण सामान्य मूल्य स्तर बढता है तब उसे मुद्रा स्फीति कहते हैं। ऐसे द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद जर्मनी में हुआ।

5. साख स्फीति

जब मुद्रा की पूर्ति तो स्थिर रहे परन्तु व्यापारिक बैंकों द्वारा अत्यधिक साख का सृजन करने के कारण सामान्य मूल्य स्तर में वृद्धि हो तब उसे साख स्फीति कहते हैं।

6. घाटा प्रेरित स्फीति

जब सरकार अपने व्यय को पूरा करने के लिए घाटे की वित्त व्यवस्था (नोट निर्गमन) अपनाती है तब सामान्य मूल्य स्तर बढ जाता है, इसे घाटा प्रेरित स्फीति कहते हैं।

7. मजदूरी प्रेरित स्फीति

श्रम संघ सामूहिक सौदेबाजी की शक्ति का प्रयोग करके मजदूरी बढवाने में सफल हो जाते हैं, जिससे लागत बढ जाती है। ऐसी स्थिति में मूल्य में होने वाली वृद्धि लागत प्रेरित स्फीति कहलाती है।

8. लाभ प्रेरित स्फीति

निर्माताओं के लाभ में वृद्धि के कारण मूल्य स्तर में होने वाली वृद्धि लाभ प्रेरित स्फीति कहलाती है।

9. पूर्ण एवं आंशिक स्फीति

जब मूल्य स्तर में वृद्धि समाज के सभी वर्गों तथा सभी वस्तुओं को प्रभावित करती है तब उसे पूर्ण स्फीति कहते हैं परन्तु यदि प्रभाव कुछ विशेष क्षेत्र एवं वस्तुओं तक सीमित रहता है तब उसे आंशिक स्फीति कहते हैं।

मुद्रास्फीति के विभिन्न सिद्धान्त अथवा मुद्रास्फीति के कारण

यद्यपि की मुद्रा स्फीति के अनेक कारण हैं, परन्तु इस इकाई में हम लोग तीन महत्वपूर्ण कारण अथवा सिद्धान्त पर चर्चा करेंगे :-

(क) माँगजन्य मुद्रास्फीति (Demand Pull Inflation)

कींसवादी तथा मुद्रावादी दोनों ही यह मानते हैं कि अतिरिक्त माँग मुद्रा स्फीति का कारण है। मुद्रावादियों के अनुसार मुद्रा की मात्रा में वृद्धि स्फीति के लिए जिम्मेदार है जबकि कीसवादियों के अनुसार कुल व्यय में वृद्धि माँग को बढाती है जो स्फीति का कारण है। इसका अभिप्राय यह है कि मूल्य में वृद्धि केवल मुद्रा की मात्रा में वृद्धि से ही नहीं होती, बल्कि मुद्रा की मात्रा अपरिवर्तित रहने पर भी यदि पूँजी की सीमान्त उत्पादकता तथा व्यक्ति की उपभोग प्रवृत्ति में वृद्धि के कारण कुल व्यय में होने वाली वृद्धि मूल्य स्तर को बढा देगी।

कींस के अनुसार पूर्ण रोजगार के पहले मुद्रा की मात्रा या माँग में वृद्धि से मूल्य में होने वाली वृद्धि बाधा स्फीति (Bottle neck Inflation) कहलाती है। पूर्ण रोजगार के बाद यदि माँग और बढती है तो केवल मूल्य में वृद्धि होती है। इसे ही वास्तविक स्फीति (True Inflation) कहा जाता है। इस स्थिति को चित्र द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

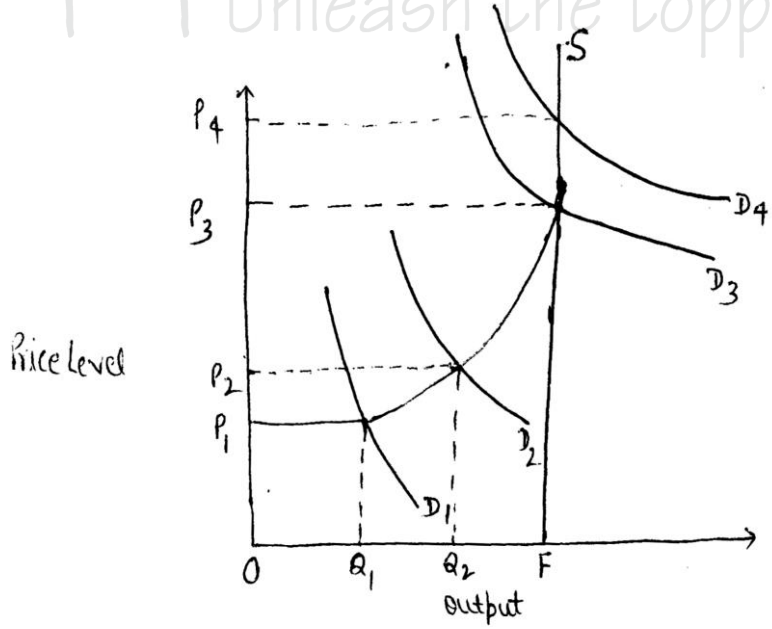

उपर्युक्त चित्र में माँग प्रेरित स्फीति प्रदर्शित है। x अक्ष पर उत्पादन तथा y अक्ष पर कीमत स्तर प्रदर्शित है। थ् बिन्दु पूर्ण रोजगार बिन्दु है। थ् बिन्दु के पहले माँग बढने पर (P_1 से P_2) उत्पादन एवं मूल्य दोनों बढते है। इसलिए कींस इसे अर्द्ध स्फीति कहते है। किन्तु थ् बिन्दु के बाद माँग बढने से केवल

मूल्य P_3 से P_4 हो जाता है जबकि उत्पादन में कोई वृद्धि नहीं होती है और पूर्तिरेखा s पूर्णतया बेलोचदार हो जाती है, यही वास्तविक स्फीति है।

(ख) लागत वृद्धि स्फीति (**Cost Push Inflation**)

जॉन मेनार्ड कींस द्वारा प्रतिपादित 'जनरल थियरी (General Theory)' तथा 'हाऊ टू पे फार द वार (How to pay for the war)' के प्रकाशन के बाद मूल्य स्तर के निर्धारण में लागत की अवहेलना की गयी। 1959 में विलाई थार्प तथा रिचर्ड क्वांट ने अपनी पुस्तक 'द न्यू इन्फ्लेशन (The New Inflation)' में मूल्य स्तर को प्रभावित करने वाले कारकों में लागत पर जोर दिया। लागतों में आक्रामक वृद्धि के अनेक कारण हो सकते हैं, जैसे– एकाधिकारी अंश की विद्यमानता, श्रम संघों का दबाव, उत्पादक का अल्पाधिकारी दशाओं में कार्य करना, दबाव डालने वाले अन्य सामाजिक कारण, सरकार द्वारा चलाये गये श्रम कल्याणकारी कार्यक्रम तथा सरकारी नियम और कानून आदि लागत में वृद्धि कर सकते हैं, लागत प्रेरित स्फीति तीन प्रकार की होती है–

1. मजदूरी प्रेरित स्फीति
   श्रम लागतों में वृद्धि के कारण लागत में वृद्धि से मूल्य में होने वाली वृद्धि को मजदूरी प्रेरित स्फीति कहते हैं।

2. लाभ प्रेरित स्फीति
   लाभ में वृद्धि के कारण मूल्यों में होने वाली वृद्धि को लाभ प्रेरित स्फीति कहते हैं।

3. सामग्री लागत प्रेरित
   उत्पादन साधनों की कीमतों में वृद्धि होने के कारण मूल्य स्तर में होने वाली वृद्धि सामग्री लागत प्रेरित स्फीति कहलाती है।

लागत प्रेरित स्फीति को रेखाचित्र द्वारा समझाया जा सकता है।

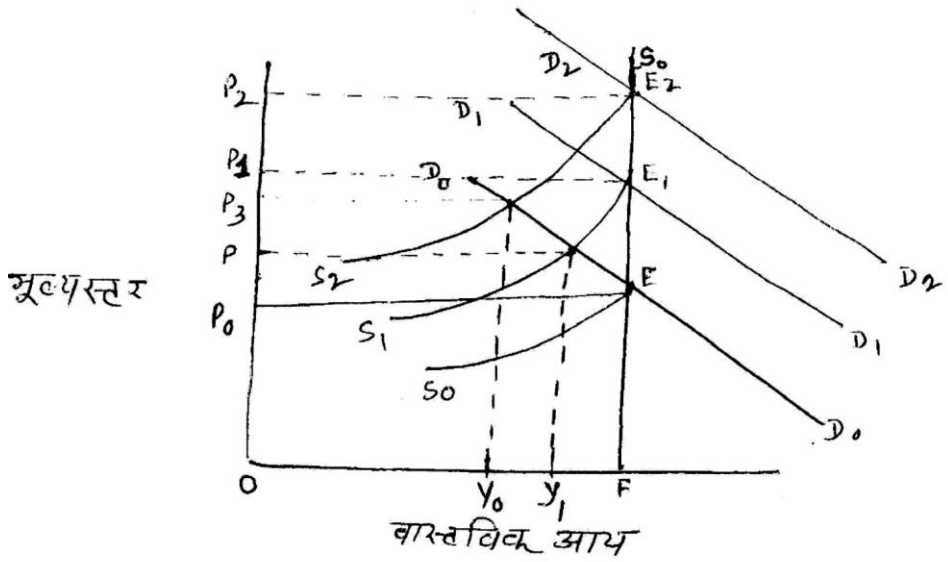

इस चित्र में D_0D_0 माँग फलन तथा S_0S_0 पूर्ति फलन है जो E बिन्दु के बाद पूर्णतया बेलोचदार हो जाती है। OF पूर्ण रोजगार स्तर की आय है। E बिन्दु पर अर्थव्यवस्था साम्य में है क्योंकि यहाँ माँग (D_0D_0) द्ध तथा पूर्ति (S_0S_0) बराबर हैं। मान लिया मजदूरों की मजदूरी बढ़ने तथा एकाधिकारिक या अल्पाधिकारिक उद्योगों द्वारा ऊँची कीमत लिये जाने के कारण पूर्ति रेखा S_1S_0 हो जाती है। परिणामस्वरूप नया साम्य पूर्ण रोजगार स्तर से कम आय OY_1 तथा मूल्य स्तर OP पर स्थापित होता है। पूर्ति के और विवर्तित होने पर पूर्ति रेखा S_2S_0 हो जाती है जो आय के स्तर OY_0 तथा मूल्य स्तर OP_0 पर सन्तुलन स्थापित करता है। यदि सरकार पूर्ण रोजगार के स्तर के आय OF को बनाये रखना चाहती है तब उसे माँग बढाना पडेगा। माँग के D_1D_1 होने पर आय के OF स्तर पर कीमत स्तर OP_1 है जो OP से अधिक है। यदि माँग और बढ कर D_2D_2 हो जाती है तब आय के OF स्तर पर कीमत स्तर OP_2 हो जायेगी जो OP_3 से अधिक है।

माँग आधिक्य तथा लागत वृद्धि स्फीति की व्याख्या से स्पष्ट होता है कि वास्तव में मुद्रा स्फीति दोनों कारणों का मिश्रित प्रभाव है। स्फीति का प्रारम्भ किसी भी एक कारण से हो सकता है परन्तु अन्तिम रूप में दोनों संयुक्त रूप से प्रभाव डालते हैं।

मुद्रा स्फीति के कारणों को संक्षेप में इस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं

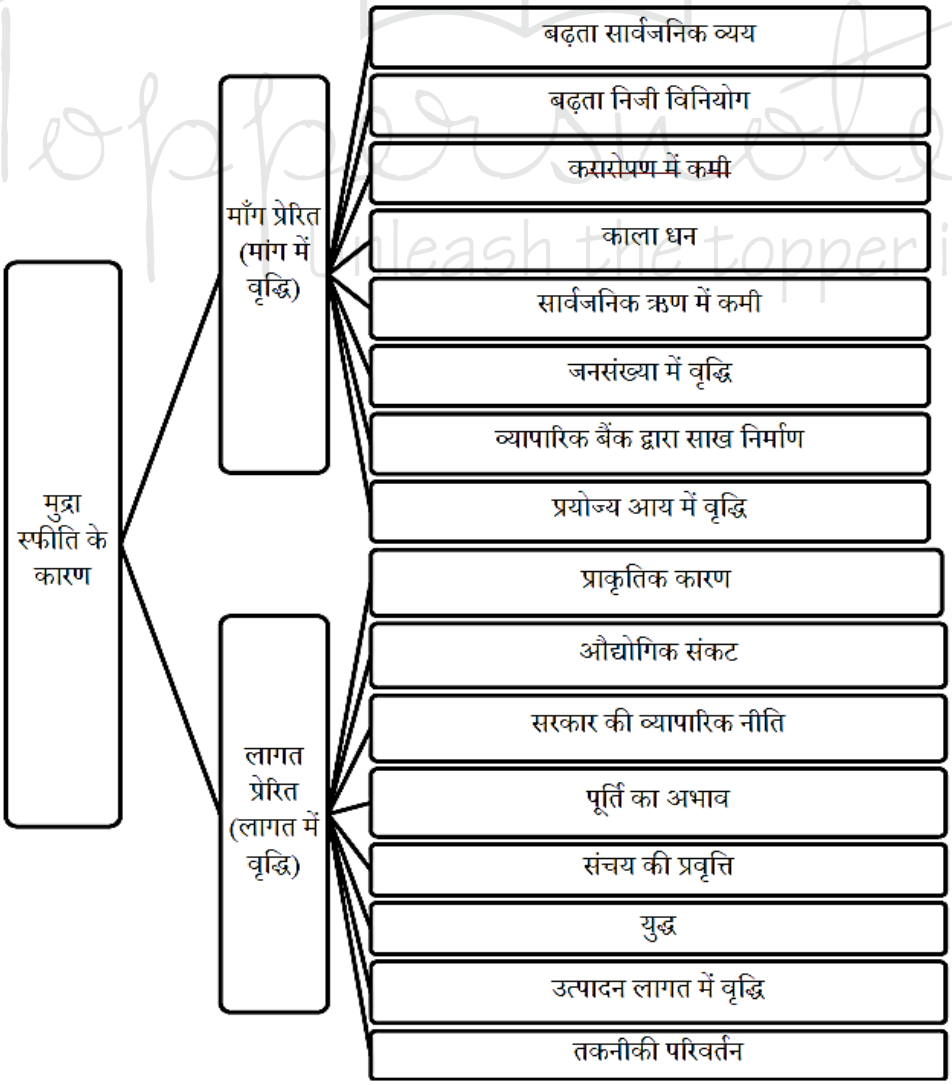

मुद्रा स्फीति के प्रभाव

1922 में जर्मनी में व्याप्त मुद्रा स्फीति पर गौर करें तो हम पाते हैं कि स्फीति, आर्थिक विषमता, सामाजिक असन्तोष, भ्रष्टाचार एवं नैतिक पतन, बनावटी समृद्धि, साधनों का अनुपयुक्त आवंटन तथा मुद्रा में अविश्वास, जैसी समस्याएँ उत्पन्न करती हैं। मुद्रा स्फीति के प्रभाव के चार भागों में बांटा जा सकता है ।

(अ) आर्थिक प्रभाव (ब) गैर आर्थिक प्रभाव

(स) सामाजिक प्रभाव (द) राजनैतिक प्रभाव

(अ) आर्थिक प्रभाव

1. उत्पादन तथा रोजगार पर प्रभाव

स्फीति की मन्द गति निश्चित रूप से अर्थव्यवस्था के लिए बूस्टर का कार्य करती है। मूल्यों में थोडी वृद्धि उत्पादकों में सकारात्मक उत्साह पैदा करती है, जिससे उत्पादन तथा रोजगार में वृद्धि होती और उनका लाभ बढता है परन्तु पूर्ण रोजगार के बाद केवल कीमतें बढती हैं, जिससे उत्पादन में कमी तथा बेरोजगारी फैलती है। तीव्र स्फीति उत्पादन के बजाय सट्टेबाजी को बढावा देती है, जिससे बाजार में अनिश्चितता उत्पन्न होती है। वास्तविक आय कम हो जाने के कारण बचत तथा पूँजी निर्माण प्रभावित होता है। बाहरी वस्तुओं के सस्ता होने के कारण बचत तथा पूँजी निर्माण प्रभावित होता है। बाहरी वस्तुओं के सस्ता होने के कारण लोग आयात पर अधिक आश्रित होने लगते हैं, जिससे देश की पूँजी बाहर की ओर पलायन करने लगती है। मूल्य अधिक होने के कारण लोगों में वस्तुओं के संचय की प्रवृत्ति बढती है, जिससे वस्तुओं की कमी की समस्या संचयी रूप ले लेती है। साधनों का बंटवारा भी लाभपूर्ण उद्योगों के पक्ष में हो जाता है, परिणामस्वरूप आवश्यक वस्तुओं के स्थान पर विलासित पूर्ण वस्तुओं के उत्पादन को बढावा मिलता है।

2. आय तथा सम्पत्ति के वितरण पर प्रभाव

मुद्रा स्फीति निश्चित रूप से मौद्रिक आय में तेजी से वृद्धि करती है परन्तु इसका बंटवारा समाज के सभी वर्गों में बराबर नहीं होता है चूंकि सभी वस्तुओं के मूल्य में समान वृद्धि नहीं होती है, इसलिए आय के वितरण में असमानता स्वाभाविक है। उत्पादक, व्यापारी तथा सट्टेबाज स्फीति से लाभान्वित होते हैं, क्योंकि कीन्स के अनुसार – कीमत तथा मजदूरी (लागत) की दौड में मजदूरियाँ सदैव पीछे रह जाती है और इन्हें आकस्मिक लाभ प्राप्त होता रहता है।

3. ऋणी तथा ऋणदाता पर प्रभाव –

मुद्रा स्फीति से ऋणी को लाभ तथा ऋणदाता को हानि होती है। एक व्यक्ति 2010 में किसी साहूकार से 10 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की दर से रु0 1000 उधार लेता और उससे 1 क्विंटल गेहूँ खरीदता है। 2012 में वह साहूकार को रु0 1200 वापस करता है परन्तु स्फीति के कारण 1 क्विंटल गेहूँ का मूल्य रु0 1400 हो गया है। ऐसे में साहूकार को रु0 200 का लाभ नहीं बल्कि रु0 200 की हानि होगी।

4. निवेशक पर प्रभाव

निवेश के स्वरूप के अनुसार निवेशकों पर प्रभाव पडता है। बाण्ड तथा ऋण पत्रों में, जिनका प्रतिफल स्थिर रहता है, निवेश कम हो जाता है। इक्वीटी, जिस पर प्रतिफल की दर मूल्य स्तर से सम्बद्ध होती है, में निवेश हो सकता है। कीमत बढने पर शेयरों पर प्रतिफल बढता है इसलिए निवेश हो सकता है।

5. <u>स्थिर आय वर्ग पर</u>

निश्चित रूप से आय के स्थिर रहने पर स्फीति से क्रय शक्ति घट जाती है और स्थिर आय वर्ग पर विशेषकर वेतनभोगी वर्ग पर बुरा प्रभाव पडता है। यद्यपि की श्रम संघ कुछ वेतन बढवाने में सफल हो जाते हैं किन्तु जैसा कि कीस ने कहा कि मजदूरियाँ सदैव पीछे रह जाती हैं।

6. <u>किसानों पर प्रभाव</u>

किसान उत्पादक तथा ऋणी दोनों होते हैं, इसलिए इनके उपर स्फीति का अच्छा प्रभाव पडता है। कर और ब्याज बढते तो हैं लेकिन उपज का मूल्य अधिक तेजी से बढता है। इसके साथ ही उन्हें अपने ऋणों की अदायगी करने में भी सहायता मिलती है।

7. <u>उपभोक्ता वर्ग</u>

यदि उपभोक्ता की आय परिवर्तनशील है तब तो स्फीति का प्रभाव बुरा नहीं पडेगा, परन्तु इस श्रेणी के उपभोक्ता कम ही होते हैं। अधिकतर उपभोक्ताओं की आय स्थिर होती है तथा स्फीति उनकी क्रय शक्ति को कम कर देता है। परिणामस्वरूप इन्हें अपने वर्तमान जीवन स्तर को बनाये रखने के लिए पहले से अधिक परिश्रम करना पडता है।

जर्मनी की स्फीति को लक्ष्य करके सेम्युलसन ने लिखा कि, ''पहले हम जेब में द्रव्य ले जाते थे और टोकरे में सामान ले आते थे और अब हम टोकरे में द्रव्य ले जाते हैं और जेब में सामान ले आते हैं।''

(ब) गैर-आर्थिक प्रभाव

मुद्रा स्फीति के गैर आर्थिक प्रभाव निम्नलिखित हैं

1. <u>नैतिक पतन</u> :- ऊँचे मूल्य से अधिक लाभ कमाने के लिए उत्पादक तथा व्यापारी अनैतिक कार्यों, जैसे- मिलावट, किस्म में गिरावट तथा मुनाफाखोरी, में संलग्न हो जाते हैं।
2. <u>घूसखोरी का प्रोत्साहन</u> :- नियन्त्रणों को लागू करने के नाम पर सरकारी तन्त्र भी उस व्यवस्थित अव्यवस्था का अंग बन जाता है और घूसखोरी तथा भ्रष्टाचार शिष्टाचार का रूप लेता है।

(स) सामाजिक प्रभाव

मुद्रा स्फीति के सामाजिक प्रभाव निम्नलिखित हैं

1. <u>आर्थिक विषमता</u> :- मुद्रा स्फीति धनी तथा अवसर सम्पन्न लोगों को और धनी तथा गरीबों और मजलूमों को और अधिक मजबूर कर देती है। इससे समाज में असन्तोष तथा अशान्ति बढती है।
2. <u>बेरोजगारी में कमी</u> :- इसे बुराई का अच्छा लाभ कहा जा सकता है, बडे पैमाने पर उद्योगों की स्थापना होने के कारण बेरोजगारी की समस्या का काफी हद तक समाधान हो जाता है।
3. <u>संचय में कमी</u> :- स्फीतिकाल में क्रय शक्ति में कमी होने के भय से लोग वस्तुओं को खरीदना प्रारम्भ कर देते हैं, जिससे संचय की प्रवृत्ति घटती है।
4. <u>हडतालें</u> :- स्फीति काल में मजदूरी बढाने के लिए प्रायः हडतालें होती रहती हैं।

(द) राजनैतिक प्रभाव

1. राजनैतिक परिवर्तन

   सरकारों के लिए सदैव मूल्यों में तीव्र वृद्धि चिन्ता का विषय रही है। यह जनता में असन्तोष तथा सरकार के प्रति जनता में अविश्वास उत्पन्न करती है। इसका अन्य विपक्षी दल लाभ उठाते है तथा कभी-कभी सत्ता ही परिवर्तित हो जाती है। स्फीति के कारण इटली, फ्रान्स तथा स्पेन में सत्ता परिवर्तन हुए है।

2. व्यक्तिगत स्वतन्त्रता वेमानी

   स्फीति को नियन्त्रित करने के लिए सरकार द्वारा तरह-तरह के प्रतिबन्ध लगाये जाते है, जिससे व्यक्तिगत स्वतन्त्रता प्रभावित होती है तथा प्रजातन्त्र व्यावहारिक स्वरूप खो देते है।

मुद्रास्फीति का नियन्त्रण

समाज के विभिन्न वर्गों पर पडने वाले कुप्रभाव को देखते हुए मुद्रा स्फीति पर त्वरित एवं प्रभावशाली नियन्त्रण अपरिहार्य है। मुद्रा स्फीति को नियन्त्रित करने के लिए तीन उपाय किये जा सकते है।

(अ) मौद्रिक उपाय
(ब) राजकोषीय उपाय
(स) अन्य उपाय

मुद्रा स्फीति को नियन्त्रित करने के विभिन्न उपायों को संक्षेप में इसप्रकार व्यक्त कर सकते है।